।। अथ श्रीसाईसच्चरित।। अध्याय २१ वा।।

।। श्रीगणेशाय नमः।। श्रीसरस्वत्यै नमः।। श्रीगुरुभ्यो नमः।। श्रीकुलदेवतायै नमः।। श्रीसीतारामचंद्राभ्यां नमः।। श्रीसद्गुरुसाईनाथाय नमः।। गताध्यायांतीं कथानुसंधान। ठाकूरादिकां महापुरूषदर्शन। कैसें झालें ते करावे श्रवण। एकाग्र मन करोनि।।१।। काय तया वक्त्याच्या बोलें। श्रवणीं जें पडतां श्रोता न डोले। अंगींचा रोमांचही न हाले। व्यर्थ गेले ते बोल।।२।। जया श्रवणीं न श्रोते रिझले। बाष्पगद्गद कंठ न दाटले। नयनीं प्रेमानंदाश्रु न वाहिले। व्यर्थ गेलें तें कथन।।३।। वाणी बाबांची मनोहारिणी। उपदेशाची अलौकिक सरणी। जयांची प्रतिपदीं अभिनव करणी। मस्तक चरणीं तयांचे।।४।। न येतां दैव उदयासी। गांठी न पडे साधुसंतांशी। तो जवळ असता उशापाशीं। पापराशींस दिसेना।।५।। या प्रमेयाच्या सिद्धतेसी। नलगे जावें देशीं विदेशी। मीच माझिया अनुभवासी। श्रोतियांसी कथितों कीं।।६।। पीर मौलाना नामें प्रसिद्ध। होते वांद्रें शहरीं सिद्ध। हिंदू पारशी परधर्मी प्रबुद्ध। घेती शुद्ध दर्शन तें।।७।। मी ते शहरचा न्यायाधीश। मुजावर तयांचा नाम इनूस। पाठ पुरविली रात्रंदिवस। यावया दर्शनास तयानें।।८।। हजारों लोक तेथें यावे। किमर्थ आपण तेथें जावें। भीडेभाडेच्या भरीं भरावें। आंचवावें निज लौकिका।।९।। ऐसें कांहीं मनीं भावावे। दर्शनास कधींहीं न जावें। आपणचि आपल्या छायेस भ्यावें। दुदैंव यावें आडवें।।१०।। ऐसी कित्येक वर्षे गेलीं। तेथूनि पुढें बदली झाली। पुढें जेव्हां ती वेळ आली। शिरडी जोडिली अखंड।।११।। तात्पर्य हा संतसमागम। अभाग्यास ना तेथें रिगम। होतां ईश्वरी कृपा का सुगम। अन्यथा दुर्गम हा योग।।१२।। ये विषयींची गोड कथा। श्रोतां सादर परिसिजे आतां। या संतांच्या अनादि संस्था। गुह्य व्यवस्था कैशा त्या।।१३।। यथाकाल-वर्तमान। जया जें जें आवडे स्थान। अवतार घेती कार्याकारण। परी ते अभिन्न परस्पर।।१४।। देश-काल-वस्तु भिन्न। परी एकाची जी ऊणखूण। दुजा संत जाणे संपूर्ण। अंतरीं एकपण सकळिकां।।१५।। जैसीं सार्वभौम राजाचीं ठाणीं। वसविलीं असतीं ठिकठिकाणीं। तेथ तेथ अधिकारी नेमुनी। अबादानी संपादिती।।१६।। तैसाच हा स्वानंद सम्राट। जागोजागीं होऊनि प्रकट। चालवी हा निजराज्यशकट। सूत्रें अप्रकट हालवी।।१७।। एकदां एक आग्लविद्याविभूषित। बी.ए. उपपदानें युक्त। जे हळू हळू मार्ग क्रमत। झाले नामांकित अधिकारी।।१८।। मिळालीं पुढें मामलत। वाढतां वाढतां झाले प्रांत। तयांसी साईबाबांचा सांगात। सुदैवें प्राप्त जाहला।।१९।। दिसाया ही मामलत बरी। डोंगरी जैसी दुरूनि साजरी। निकट जातां वेढिली काजरीं। मानें परी ती मोठीच।।२०।। गेले ते पूर्वील गोड दिवस। जैं होती या अधिकाराची हौस। प्रजाही मानी अधिकारियास। परस्परांस आनंद।।२१।। पुसूं नये आतांचे हाल। सुखाची नोकरी गेला तो काळ। आतां जबाबदारीचा सुकाळ। आला दुकाळ पैशाचा।।२२।। पूर्वील मामलतीचा पान। तैसेंच पूर्वील प्रांतासमान। वैभव आतां ये ना दिसून। नोकरी कसून करतांही।।२३।। असो तेंही अधिकारसंपादन। अलोट पैका वेंचल्यावांचून। न करितां सतत अभ्यासशीण। इतर कोण करूं शके।।२४।। आधीं होऊं लागे बी.ए.। मग तो नगदी कारकून होये। महिना पगार तीस रूपये। मार्गे ऐसिये ती गति।।२५।। यथाकाळ घांटावर जावें। जमीनमापणी काम शिकावें। मोजणीदारांमध्ये रहावें। पास व्हावे परीक्षे।।२६।। पुढें जेव्हां एकादी असामी। स्वयें जाईल वैकुंठधामीं। करील आपुली जागा रिकामी। पडेल कामीं ती याच्या।।२७।। आतां असो हें चऱ्हाट। कशास पाहिजे नुसती वटवट। ऐशा एकास साईंची भेट। झाली ती गोष्ट परिसावी।।२८।। बेळगांवानिकट देख। ग्राम आहे वडगांव नामक। आलें मोजणीदारांचे पथक। मुक्काम एक तैं केला।।२९।।

गांवी होते एक सत्पुरूष। गेले तयांचे दर्शनास। चरणांवरी ठेवलें शीस। प्रसाद-आशीष पावले।।३०।। त्या सत्पुरुषांचे हातांत। होता निश्चळदासकृत। 'विचारसागर' नामक ग्रंथ। जो ते वाचीत तैं होते।।३१।। पुढें कांहीं वेळ जातां। येतों म्हणूनि निघूं लागतां। ते साधू जें वदले उल्हासता। तया गृहस्था तें परिसा।।३२।। बरें आतां आपण यावें। या ग्रंथाचें अवलोकन करावें। तेणें तुमचे मनोरथ पुरावे। असावें हे लक्षांत।।३३।। तुम्ही पुढे निजकार्योद्देशें। जातां जातां उत्तर दिशे। मार्गात महाभाग्यवशें। महापुरुषासीं दर्शन।।३४।। पुढील मार्ग ते दावितील। मनासी निश्चलता ते देतील। तेच मग उपदेशितील। ठसवितील निजबोध।।३५।। तेथील मग तें कार्य सरलें। जुन्नरास तेथूनि बदलले। नाणेंघाट चढणें आलें। ओढवलें तें संकट।।३६।। मार्ग तेथिल अति बिकट। रेड्यावरूनि चढती घाट। रेडा हाच तदर्थ शकट। आणिला निकट आरूढाया।।३७।। होतील पुढें मोठे अधिकारी। मिळतील घोडे गाड्या मोटारी। आज तों घ्या रेड्याची हाजिरी। वेळ साजिरी करा कीं।।३८।। घाट चढणें अशक्य पायीं। रेडियावीण नाहीं सोई। ऐसी ती नाणेंघाटाची नवलाई। अपूर्वाई वाहनाची।।३९।। मग तयांनी केला विचार। पालाणिला रेडा केला तयार। तयावरी चढविलें खोगीर। कष्टे स्वार जाहले।।४०।। स्वार खरे पण होती चढण। रेडियासारखें अपूर्व वाहन। झोकें हिसके खातां जाण। भरली कणकण पाठींत।।४१।। असो पुढें हा प्रवास सरला। जुन्नरचा कार्यक्रम पूरला। मग बदलीचा हुकूम झाला। मुक्काम हालला तेथूनि।।४२।। कल्याणास झाली बदली। चांदोरकरांची गांठ पडली। साईनाथांची कीर्ति ऐकिली। बुद्धी उदेली दर्शनाची।।४३।। दुसरे दिवशीं आली बारी। झाली चांदोरकरांची तयारी। म्हणती चला हो बरोबरी। करूं वारी शिरडीची।।४४।। घेऊं बाबांचे दर्शन। करूं उभयतां तयांसी नमन। राहूं तेथें एक दो दिन। येऊं परतोन कल्याणा।।४५।। परी तेच दिनीं ठाणें शहरांत। दिवाणींचे अदालतींत। मुकदमा सुनावणी निर्णीत। त्यागिली सोबत तदर्थ।।४६।। नानासाहेब आग्रह करीत। चला हो आहेत बाबा समर्थ। पुरवितील तुमचा दर्शनार्थ। किंपदार्थ तो मुकदमा।।४७।। परी हें कैंचें तयांस पटे। तारीख चुकवितां भय वाटे। चुकतील केवीं हेलपट्टे। भालपट्टीं लिहिलेले।।४८।। नानासाहेब चांदोरकरें। कथिलीं पूर्वील प्रत्यंतरें। दर्शनकाम धरितां अंतरे। विघ्न तें सरे बाजूला।।४९।। परी येईना विश्वास जीवा। करितील काय निजस्वभावा। म्हणती आधीं घोर चुकवावा। निकाल लावावा दाव्याचा।।५०।। असो मग ते ठाण्यास गेले। चांदोरकर शिरडीस निघाले। दर्शन घेऊनि परत फिरले। नवल वर्तलें इकडे पैं।।५१।। वेळीं जरी हे हजर राहिले। दाव्याचें काम पुढें नेमिलें। चांदोरकरही हातचे गेले। खजील झाले अंतरीं।।५२।। विश्वास ठेवितों बरें होतें। चांदोरकर सवें नेते। दर्शनाचें कार्य उरकतें।स्वस्थचित्तें शिरडींत।।५३।।दाव्यापरी दावा राहिला। साधुसमागमही अंतरला। उठाउठीं निश्चय केला। जावयाला शिरडीस।।५४।। न जाणों मी शिरडीस जातां। समयीं नानांची भेट होतां। स्वयें निरवितील साईनाथा। आनंद चित्ता होईल।।५५।। शिरडीस नाहीं कोणी परिचित। तेथ मी सर्वथैव अपरिचित। नाना भेटतां होईल उचित। जरी क्वचित योग तो।।५६।। ऐसे विचार करीत करीत। बैसले ते अग्निरथांत। दुसरे दिवशीं पावले शिरडींत। नाना तैं अर्थात् नाहींत।।५७।। हे जे दिनीं यावया निघाले। नाना ते दिनीं जावया गेले। तेणें हे बहु हताश झाले। अति हिरमुसले मनांत।।५८।। असो मग तयांस तेथें भेटले। तयांचे दुसरे स्नेही भले। तयांनीं साईंचे दर्शन करविलें। हेतु पुरविले मनाचे।।५९।। दर्शनें पायीं जडले चित्त। घातले साष्टांग दंडवत। शरीर झालें पुलकांकित। नयनी श्रवत प्रेमाश्रु।।६०।। मग ते होता क्षणैक स्थित। काय तयांसी बाबा वदत। त्रिकालज्ञ मुख करोनि सस्मित। सावचित्त तें परिसा।।६१।। ''कानडी आप्पाचें तें सांगणें। जैसें रेडिया संगें घाट चढणें। ऐसें न येथील सोपें चालणें। अंग झिजविणें अनिवार्य''।।६२।। कर्णीं पडतां खुणेची अक्षरें। अंतरंग अधिकचि गहिंवरे। पूर्वील सत्पुरूषवचन खरें। प्रत्यंतरें ठरलें कीं।।६३।। मग जोडूनियां उभय हस्तां। साईपदीं ठेविला माथा। म्हणती

कृपा करा साईनाथा। मज अनाथा पदरीं घ्या।।६४।। आपणचि माझे महापुरुष। निश्चळदासग्रंथोपदेश। आज मज कळला अशेष। निर्विशेष सुखबोध।।६५।। कुठें वडगांव कुठें शिरडी। काय ही सत्पुरुष-महापुरुषजोडी। किती ही स्वल्पाक्षरभाषा उघडी। उपदेश-निरवडी कैसी हे।।६६।। एक म्हणती ग्रंथ वाचा। पुढें संगम महापुरुषाचा। मग ते पुढील कर्तव्याचा। उपदेश साचा करतील।।६७।। दैवयोगें तेही भेटले। तेच ते हे खुणांही पटविलें। परी तें एकाचें वाचिलें। दुजिया आचरिलें पाहिजे।।६८। तयांसी म्हणती साईनाथ। ''अप्पांनीं सांगितलें तें यथार्थ। परी जेव्हां तें येईल कृतींत। पूर्ण मनोरथ तैं होती''।।६९।। निश्र्चलदास-विचारसागर। वडगांवी भक्तार्थ झाला उच्चार। काळें ग्रंथपारायणानंतर। शिरडींत आचार कथियेला।।७०।। ग्रंथ करावा आधीं श्रवण। त्याचेंच मग करावें मनन। होतां पारायणावर्तन। निदिध्यासन होतसे।।७१।। वाचिलें ते नाहीं संपलें। पाहिजे तें कृतींत उतरलें। या उपड्या घड्यावर तोय ओतलें। तैसें जाहले ते सकळ।।७२।। व्यर्थ व्यर्थ ग्रंथवाचन। हातीं न ये जों अनुभवज्ञान। ब्रह्मसंपन्न गुरुकृपेवीण। पुस्तकी ज्ञान निष्फळ।।७३।। ये अर्थीची अल्प कथा। दावील भक्तीची यथार्थता। पुरुषार्थाची अत्यावश्यकता। श्रोंता निजस्वार्था परिसजे।।७४।। एकदां एक पुण्यपट्टणकर। नामें अनंतराव पाटणकर। साईदर्शनीं उपजला आदर। आले सत्वर शिर्डीस।।७५।। वेदान्त श्रवण जाहला सकळ। सटीक उपनिषदें वाचिलीं समूळ। परी तन्मानस अक्षयीं चंचळ। राहीना तळमळ तयांची।।७६।। घेतां साईसमर्थाचें दर्शन। निवाले पाटणकरांचे नयन। करूनि पायांचें अभिवंदन। यथोक्त पूजन संपादिलें।।७७।। मग होऊनि बद्धांजुळी। बैसूनि सन्मुख बाबांचे जवळी। अनंतराव प्रेमसमेळीं। करूणाबहाळीं पुसत कीं।।७८।। केलें विविध ग्रंथावलोकन। वेदवेदांग-उपनिषदध्ययन। केलें सच्छास्त्र-पुराणश्रवण। परी हे निर्विण्ण मन कैसें।।७९।। वाचिलें तें व्यर्थ गेलें। ऐसेंच आतां वाटूं लागलें। अक्षरहीन भावार्थी भले। वाटती चांगले मजहून।।८०।। वायां गेलें ग्रंथावलोकन। वायां शास्त्रपरिशीलन। व्यर्थ हें सकळ पुस्तकी ज्ञान। अस्वस्थ मन हें जोंवरी।।८१।। काय ती फोल शास्त्रव्युत्पत्ती। किमर्थ महा-वाक्यानुवृत्ती। जेणें न लाधे चित्तास शांति। ब्रह्मसंवित्ति काशाची।।८२।। कर्णोपकर्णी परिसिली वार्ता। साईदर्शनें निवारें चिंता। विनोद गोष्टी वार्ता करितां। सहज सत्पथा लाविती ते।।८३।। म्हणवून महाराज तपोराशी। पातलों आपुल्या पायांपाशी। येईल स्थैर्य माझिया मनासी। आशीर्वचनासी द्या ऐशा।।८४।। तवं महाराज झाले कथिते। एका विनोदपर आख्यायिकेतें। जेणें अनंतराव समाधानाते। पावले साफल्यते ज्ञानाच्या।।८५।। ती अल्पाक्षार परमसार। कथा कथितों व्हा श्रवणतत्पर। विनोद परी तो बोधपर। कोण अनादर करील।।८६।। बाबा देत प्रत्युत्तर। ''एकदां एक आला सौदागर। तेव्हां एक घोडें समोर। घाली लेंडार नवांचें।।८७।। सौदागर निजकार्यतत्पर। लेंडिया पडतां पसरिला पदर। बांधून घेतां घट्ट त्या समग्र। चितैकाग्र्य लाधला''।।८८।। हेंकाय वदले साईसमर्थ काय असावा कीं मथितार्थ। लेंडिया संग्रही सौदागर किमर्थ। कांहींही अर्थ कळेना। ८९।। ऐसा विचार करीत करीत। अनंतराव माघारा येत। कथिलें संभाषण इत्थंभूत। केळकरांप्रत तयानें।।९०।। म्हणती सौदागर तो कोण। लेंडियांचें काय प्रयोजन। नवांचेंच काय कारण। सांगा उलगडून हें मजला।।९१।। दादा हें काय आहे कोडें। मी अल्पबुद्धी मग तें नुलगडे। होईल बाबांचें हृदय उघडें। ऐसें रोकडें मज कथा।।९२।। दादा वदती मजही न कळे। ऐसेंच बाबांचे भाषण सगळें। करी तयांच्याच स्फूर्तीच्या बळें। कथितों आकळे जें मज।।९३।। कृपा ईश्वरी तें हें घोडें। हें तों नवविधा भक्तीचें कोडें। विनाभक्ति न परमेश्वर जोडे। ज्ञाना न आतुडे एकल्या।।९४।। श्रवण-कीर्तन-विष्णुस्मरण। चरणसेवन-अर्चन-वंदन। दास्य-सख्य-आत्मनिवेदन। भक्ति हे जाण नवविधा।।९५।। पूर्ण भाव ठेवूनि अंतरी। यांतून एकही घडली जरी। भावाचा भुकेला श्रीहरी। प्रकटेल घरींच भक्ताच्या।।९६।। जपतपव्रत योगसाधन। वेदोपनिषदपरिशीलन। उदंड अध्यात्मज्ञान-निरूपण। भक्तिविहीन तें

फोल।।९७।। नको वेदशास्त्रव्युत्पत्ती। नको ज्ञानी हे दिगंतकीर्ति। नको शुष्कभजनप्रीती। प्रेमळ भक्ति पाहिजे।।९८।। स्वयें आपणा सौदागर समजा। सौद्याच्या या भावार्था उमजा। फडकतां श्रवणादि भक्तीची ध्वजा। ज्ञानराजा उल्हासे।।९९।। घोड्यानें घातल्या लेंड्या नऊ। सौदागर आतुरतें धांवला घेऊं। तैसाच नवविधा भक्तिभावु। धरितां विसावुं मनातें।।१००।। तेणेंच मनास येईल स्थैर्य। सर्वांठायी सद्‌भाव गांभीर्य। त्यावीण चांचल्या हें अनिवार्य। कथिती गुरुवर्य सप्रेम।।१०१।। दुसरे दिवशी अनंतराय। वंदूं जातां साईंचे पाय। ''पदरी बांधिल्या लेंड्या काय''। पृच्छा ही होय तयांस।।१०२।। अनंतराव तेव्हां प्रार्थिती। कृपा असावी दिनावरती। सहज मग त्या बांधिल्या जाती। काय ती महती तयांची।।१०३।। तंव बाबा आशीर्वाद देती। ''कल्याण होईल'' आश्वासिती। अनंतराव आनंदले चित्तीं। सुखसंवित्ति लाधलें।।१०४।। आतां आणीक अल्प कथा। श्रोतां परिसिजे सादरचित्ता। कळेल बाबांची अंतर्ज्ञानिता। सन्मार्गप्रवर्तकता तैसीच।।१०५।। एकदां एक वकील आले। येतांक्षणींच मशिदी गेले। साईनाथांचें दर्शन घेतलें। पाय वंदिले तयांचे।।१०६।। सवेंच मग देऊन दक्षिणा। बैसले बाजूस वकील तत्क्षणा। तेथें चालल्या साई-संभाषणा। आदर श्रावणा उपजला।।१०७।। बाबा तवं तिकडे मुख फिरविती। वकीलांस अनुलक्षून वदती। बोल ते वर्मी जाऊन खोंचती। वकील पावती अनुताप।।१०८।। ''लोक तरी हो लबाड किती। पायां पडती दक्षिणाही अर्पिती। आणीक आतून शिव्याही देती। काय चमत्कृती सांगावी''।।१०९।। ऐकून हें वकील स्वस्थ राहिले। कीं ते निजांतरीं पूर्ण उमजले। उद्‌गार अन्वर्थ हें तयां पटलें। तात्पर्य ठसलें मनासी।।११०।। पुढें जेव्हां ते वाड्यांत गेले। दीक्षितांलागीं कथिते झाले। कीं जे बाबा लावूनि बोलले। सार्थचि वहिलें तें सर्व।।१११।। येतांच मजवर झाडिला ताशेरा। तो मज केवळ दिधला इशारा। कुणाची थट्टानिंदादि प्रकारा। देईं न थारा अंतरी।।११२।। शरीरप्रकृति होऊनि अस्वस्थ। मुन्सफ आमुचे झाले त्रस्त। राहिले रजेवर येथें स्वस्थ। आपुली प्रकृती सुधरावया।।११३।। वकीलांच्या खोलींत असतां। मुन्सफांसंबंधें निघाल्या वार्ता। अर्थोअर्थी संबंध नसतां । ऊहापोहता चालली।।११४।। औषधावीण या शरीरापदा। टळतील का लागतां साईंच्या नादा। पावले जे मुन्सफीचे पदा। तयां हा धंदा साजे कां।।११५।। ऐसी तयांची निंदा चालतां। चालली साईंची उपहासता। मीही तयांतचि होतों अंशता। तिची अनुचितता दर्शविली।।११६।। ताशेरा नव्हे हा अनुग्रह। व्यर्थ कुणाचा ऊहापोह। उपहास-निंदादि कुत्सित संग्रह। असत्परिग्रह वर्जावा।।११७।। आणीक एक हें प्रत्यंतर। असतां शंभर कोसांचे अंतर। साईजाणें सर्वाभ्यंतर। खरे अंतर्ज्ञानी ते।।११८।। आणिक एक झाला निवाड। असोत मध्यें पर्वत पहाड। कांही न साईंच्या दृष्टीआड। गुप्तही उघड त्यां सर्व।।११९।। असो पुढें तेव्हांपासुनी। केला निश्चय वकीलांनी। अतःपर निंदा-दुरुक्तिवचनीं। खडा कानीं लाविला।।१२०।। आपण कांहींही कुठेंही करितां। येई न साईंची दृष्टी चुकवितां। येविषयी जाहली निश्चितता। असत्कार्यार्थता विराली।।१२१।। उदेली सत्कार्य-जागरूकता। मागें पुढें साईसन्निधता। समर्थ कोण तयां वंचिता। निर्धार चित्ता हा ठसला।।१२२।। पाहूं जातां या कथेसी। संबंध जरी त्या वकीलासी। तरी ती सर्वांर्थी आणि सर्वांसी सारिखी।।१२३।। वकील वक्ते श्रोते समग्र। आणि साईंचे भक्त इतर। तयांचाही ऐसाच निर्धार। व्हावा मी साचार प्रार्थितों।।१२४।। साईकृपामेघ वर्षतां। होईल आपणां सर्वांची तृप्तता। ये अर्थी कांहीं नाहीं नवलता। सकळां तृषार्ता निववील।।१२५।। अगाध साईनाथांचा महिमा। अगाध तयांच्या कथा परमा। अगाध साईचरित्राची सीमा। मूर्त परब्रह्मावतार।।१२६।। आतां पुढील अध्यायीं कथा। परिसावी सादर श्रद्धाळू श्रोतां। पुरवील तुमच्या मनोरथा। देईल चित्ता स्थैर्यता।।१२७।। भक्तांची भावी संकटावस्था। ठाऊक आधींच साईसमर्था। थट्टामस्करी विनोद वार्ता। हंसतां खेळतां टाळिती।।१२८।। भक्तहेमाड साईंस शरण। जाहलें हें कथानक संपूर्ण। पुढील कथेचें अनुसंधान। संकटनिवारण भक्तांचें।।१२९।। कैसे साई कृपासागर। भक्तांची

भावी संकटें दुर्धर। आधीं जाणूनि करिता परिहार। इशारा वेळेवर देउनी।।१३०।। स्वस्ति श्रीसंतसज्जनप्ररिते। भक्तहेमाडपंतविरचिते। श्रीसाईसमर्थसच्चरिते। अनुग्रहकरणं नाम एकविंशोऽध्यायः संपूर्णः।।

।। श्रीसद्गुरुसाईनाथार्पणमस्तु।। शुभं भवतु।।